International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED), ISSN: 2320-8708
Vol. 2, Issue 5, Sept.-Oct., 2014, pp: (25-30), Impact Factor: 1.267, Available online at: www.erpublications.com

साहित्य में अनुवाद की उपयोगिता

डॉ. रश्मिप्रभा

सह प्रवक्ता, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय

सारांश

साहित्य समाज का दर्पण होता है। किसी भी देश की सभ्यता और संस्कृति से परिचित होने का सुगम मार्ग उस देश का साहित्य ही होता है परन्तु इस मार्ग में एक बड़ी बाधा भाषा के रूप में होती है। हम सभी देशों की भाषाओं के ज्ञाता नहीं होते और भाषा के ज्ञान का यह अभाव हमें दूसरी भाषा के साहित्य से और दूसरी भाषा–भाषी लोगों को हमारी भाषा के साहित्य से अनभिज्ञ रहने के लिए विवश कर देता है। इस प्रकार हम अन्य भाषाओं के साहित्य के रसास्वादन एवं आनन्दाभूति से वंचित रह जाते हैं। यह भी सत्य है कि हम संसार की सभी भाषाएं नहीं सीख सकते। अतः अपनी भाषा से इत्तर अन्य भाषाओं के साहित्य के पठन–पाठन एवं रसास्वादन हेतु एक विकल्प की आवश्यकता अनुभव हुई। वह विकल्प है– अनुवाद। अनुवाद दो भाषाओं के बीच की दूरी दूर कर साहित्य रसास्वादन का मार्ग सुगम बना देता है जिससे भाषा की अज्ञानता की बाधा दूर हो जाती है। अनुवाद के माध्यम से दूसरी भाषाओं के साहित्य को पढ़ना, समझना, सरल हो जाता है। इस प्रकार ज्ञानार्जन के साथ–साथ रसास्वादन की अनुभूति भी होती है। अतः साहित्य में अनुवाद अत्यंत उपयोगी है।

साहित्य में अनुवाद की उपयोगिता है या नहीं इस दृष्टिकोण से इस विषय पर दृष्टिपात किया तो मन मस्तिष्क में अनेक प्रश्न उत्पन्न हुए यथा– साहित्य क्या है? साहित्य किस प्रकार लोकहित में अहम् भूमिका निभाता है। साहित्य में अनुवाद की क्या उपयोगिता है। लेकिन इन सबसे पूर्व यह जानना आवश्यक है कि साहित्य किसे कहते हैं, उसके उपरांत यह जिज्ञासा का विषय है कि साहित्य में अनुवाद की आवश्यकता क्यों अनुभव की गई। क्या साहित्य में किया गया अनुवाद उपयोगी सिद्ध हो सकता है? क्या अनुदित सामग्री मूल पाठ जैसी रसानुभूति कराने में सक्षम हो सकती है? यदि हां तो साहित्य का अनुवाद करने हेतु किन बातों को दृष्टिगत किया जाना चाहिए ताकि अनुवाद करते समय आने वाली समस्याओं का सहजता से समाधान हो सके और अनुदित सामग्री मूल पाठ जैसी आनन्दानुभूति कराने में सक्षम हो सके। मनमस्तिष्क में उभरी इन समस्याओं के समाधान हेतु विचारणीय विषय हो जाता है कि "साहित्य में अनुवाद कितना उपयोगी सिद्ध हो सकता है।" अतः सर्वप्रथम साहित्य के विषय में चर्चा करना ही उचित है।

वस्तुतः प्रकृति प्रदत बुद्धि तत्व के कारण मानव सोचने समझने की शक्ति रखता है और उसके मनमस्तिष्क में अनेक भाव, विचार, आकांक्षाएं उत्पन्न होती हैं। इस विलक्षण गुण से सम्पन्न मानव जब प्रकृति के खुले वातावरण में प्राकृतिक छटा को देखकर विस्मय विमुग्ध हुआ होगा तो उसके अन्तः स्थल में अनेक अबूझ भावाश्रित चेतनाएं परोक्ष एवं अव्यक्त रूप से जागृत हुई होगी। जिन्हें समझने व अभिव्यक्त करने के लिए अनवरत प्रयास भी किये होंगे परन्तु भाषा के अभाव में उसने अपने मनोभावों, अपनी अनुभूतियों को व्यक्त करने में असमर्थता का अनुभव किया होगा। बदलते समय के साथ विकास के सोपान पर कदम बढ़ाते हुए मानव ने भाषा व लिपि को विकसित किया जिसके कारण मानव की अनुभूतियां केवल मौखिक अभिव्यक्ति के रूप में कुछ लोगों तक सीमित न रहकर लिपिबद्ध होकर विस्तृत व्यापक क्षेत्रों तक पहुंचने लगी। जब अभिव्यक्ति के भाषिक रूप ने लिपिबद्ध होकर विशिष्ट रूपाकर ग्रहण किया तो मानव ने इसका नामकरण करना भी उचित समझा और उसने अपनी सहजानुभूतियों के लिपिबद्ध रूप का नामकरण किया– 'साहित्य'

'साहित्य' वह है जो होने या रहने का अर्थ देता है यही भाव निहित है। संस्कृत की उक्ति "सहितस्य भावः इति साहित्यम्" में। संस्कृत में 'साहित्य' शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार भी मानी जाती है :– "हितेन सह तस्य भावः साहित्यम" अर्थात् जो रचना अपने भीतर प्राणी मात्र के हित साधन का भाव लिए हो वही साहित्य है। यहां साहित्य से जिस हित साधना की अपेक्षा हे। वह भाव संयत रहा करती है। इसमें जीवन के अन्तः बाह्य का सामंजस्य रहता है। इस दृष्टि को केन्द्र मानते हुए डॉ. सुरेश अग्रवाल का कथन है कि "वह विद्या जिसमें मानव का आनन्द मिश्रित और शिवत्व रूप से हित साधन हो 'साहित्य' है।"[1] साहित्य के इस व्यत्पत्ति लभ्य अर्थ के आधार पर अनेक विद्वानों ने इसे परिभाषित करने का प्रयत्न किया।

आचार्य भामह के अनुसार "शब्दार्थो सहितो काव्यम्" [2] अर्थात् शब्द अर्थ से सहित रचना ही काव्य है। आचार्य दण्डी के अनुसार "इष्टार्थव्यच्छिन्ना पदावली काव्यं" [3] अर्थात् इच्छित अर्थ का रूपायन करने वाली पदावली ही काव्य है। इसी प्रकार आचार्य रूद्रट ने "तन्नु शब्दार्थो काव्यम्"[4] कहकर साहित्य को परिभाषित किया।

संस्कृत आचार्यों द्वारा दी गई परिभाषाओं में 'साहित्य' शब्द का मूल रूप में प्रयोग न करके समस्त वाड्.मय के लिए 'काव्य' शब्द को प्रयुक्त किया है। यह प्रचलन संभवतः ईसा की आठवीं नवीं शताब्दी के बाद से माना जा सकता है। इसकी पुष्टि राजशेखर प्रदत्त परिभाषा से की जा सकती है। इन्होंने वाड्.मय के लिए 'साहित्य' शब्द प्रयुक्त करते हुए कहा है :– "शब्दार्थयो : यथावत्सह भावेन विद्याप साहित्य विद्या"[5] अर्थात् शब्द और अर्थ के यथवत् सहभाव की विद्या साहित्य है।

संस्कृत आचार्यों की भांति पाश्चात्य विद्वानों ने भी "Literature" शब्द का प्रयोग समूचे वाड्मय के लिए किया। इसी कारण एन्साइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटेनिका में दी गई परिभाषा के साहित्य के उस व्यापक अर्थ की ओर स्पष्ट इंगित करती है। "साहित्य अपने आप में एक व्यापक शब्द है, जो वास्तविक परिभाषा के अभाव में सर्वश्रेष्ठ विचारों की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त होता है और वह अभिव्यंजना लिपिबद्ध हुआ करती है।" हडसन के अनुसार :– "Literature is fundamentally an expression of life through the medium of language"[6] अर्थात् "साहित्य मूलतः भाषा के माध्यम से जीवन की अभिव्यक्ति है" एमर्सन के अनुसार "साहित्य भव्य विचारों का लेखा है" एम.जी. भटे ने साहित्य के संदर्भ में अपनी पुस्तक "Literary criticism" में लिखा है – "Literature is the music which streans out of the attempts of man attune himself to life on keyboard of language" अर्थात्

"साहित्य वह संगीत है जो कि मानव के अन्तः स्थल से इसलिए निःसृत होता है कि वह भाषा के माध्यम से जीवन के साथ अपना सामंजस्य स्थापित कर सके।"

संस्कृत आचार्यों और पाश्चात्य विद्वानों की भांति हिन्दी के विद्वानों ने भी साहित्य को परिभाषित करने का प्रयास किया है– उपन्यास कला सम्राट प्रेमचन्द के अनुसार – "साहित्य की बहुत सी परिभाषाएं की गई है पर मेरे विचार से उसकी सर्वोत्म परिभाषा जीवन की आलोचना है, चाहे वह निबंध के रूप में हो, चाहे कहानी के रूप में हो या काव्य के, उसे हमारे जीवन की आलोचना और व्याख्या करनी चाहिए" [7] बाबू गुलाब राय ने साहित्य के विषय में कहा है कि– "साहित्य संसार के प्रति हमारी मानसिक प्रतिक्रिया अर्थात् विचारों, भावों और संकल्पों की शाब्दिक अभिव्यक्ति है और वह हमारे किसी न किसी प्रकार के हित का साधन करने के कारण संरक्षणीय हो जाती है।"[8] महावीर प्रसाद द्विवेदी ने "साहित्य की महत्ता" नामक लेख में साहित्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है – "ज्ञान राशि के संचित कोष का नाम ही साहित्य है।"

साहित्य संबंधी इन परिभाषाओं से यह बात पूर्णतया स्पष्ट है कि साहित्य शब्द बहुत व्यापक है। उसे सम्पूर्णता से ग्रहण कर अभिव्यक्त करना थोड़ा कठिन है इसलिए उसके जिस पक्ष पर जिसकी दृष्टि पड़ी उसने उसी स्वरूप की व्याख्या की। अतः साहित्य के विषय में सारांशतः कहा जा सकता है कि "साहित्य वह दर्पण है जो मानव को उसका अतीत दिखाकर सुनहरे भविष्य के लिए प्रेरणा व मार्गदर्शन तो देता ही है, वहीं वर्तमान को आनन्द भी प्रदान करता है।"

इस तरह साहित्य का बाह्य स्वरूप कलात्मक होते हुए भी इसकी आत्मा रागात्मक तत्वों से संयत रहती है। साहित्य का उद्देश्य लोकरंजन के साथ–साथ सर्वतोभावेन जीवन के साथ सामंजस्य स्थापित करके उसका समग्र हित साधन करना भी है।

साहित्य समाज का दर्पण है और सभी को साथ लेकर चलने की प्रक्रिया है इसका शाब्दिक अर्थ भी यही इंगित करता है कि जिसमें सभी का हित निहित हो। अतः कहा जा सकता है कि साहित्य की रचना लोकहित हेतु है क्योंकि जब हम साहित्य पठन करते हैं या उसका स्वादन करते हैं तो हम बहुत कुछ सीखते भी हैं। यू तो साहित्य की अनेक विधाएं हैं लेकिन कुछ विधाएं यथा कहानी, उपन्यास, कविता और नाटक आदि अधिकांश रसास्वादन का केन्द्र रहते हैं। अधिकांश पाठक इन्हीं की और आकर्षित दिखाइ देता है। साहित्य केवल किसी एक भाषा में नहीं अपितु संसार की लगभग सभी भाषाओं में रचा जाता है। यह सत्य है कि हम अपनी भाषा का साहित्य पढ़ते हैं और उससे कुछ सीखते भी हैं। परन्तु संसार की अन्य भाषाओं में विरचित साहित्य और उसके माध्यम से वहां के समाज, सभ्यता और संस्कृति से अनभिज्ञ रह जाते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि हम उन भाषाओं का ज्ञान नहीं रखते हैं। विदेशी भाषा ही नहीं हम हमारे ही देश की अन्य भाषाओं में रचित साहित्य को पढ़ने, समझने और आत्मसात् कर उसका रसास्वादन करने और उससे ज्ञान हासिल करने व सीखने से वंचित रह जाते हैं क्योंकि हम उन भाषाओं का ज्ञान अर्थात् उन्हें पढ़ना, लिखना व समझना नहीं जानते हैं। तात्पर्य है कि हम उन भाषाओं के अक्षर ज्ञान से ही अपरिचित होते हैं तो उन भाषाओं के साहित्य का अध्ययन करना दुष्कर हो जाता है। इसी तरह हमारी भाषा का साहित्य अन्य भाषी लोगों के लिए उपयोगी साबित नहीं हो पाता है। भाषा के दायरे में बंधे होने के कारण हम अपनी भाषा से इतर

भाषाओं में विरचित साहित्य के रसास्वादन से वंचित हो जाते हैं तथा वो हमारी भाषा के साहित्य से अपरिचित रह जाते हैं। इस तरह भाषा की अज्ञानता के कारण हम विभिन्न भाषाओं के साहित्य और उसके माध्यम से वहां के समाज, सभ्यता व संस्कृति से अनभिज्ञ रह जाते हैं। भाषाओं की दूरी मिटाने और उसकी अज्ञानता के अभाव को दूर करते हुए साहित्य से जुड़कर उसकी आनन्द अनुभूति करने के लिए विकल्प की खोज आरम्भ हुई। आरम्भिक स्तर पर इस खोज का जो विकल्प उभरकर आया वह था साहित्य की मूल भाषा का ज्ञाता मूलभाषी मौखिक रूप से उस रचना को पढ़कर सुनाए परन्तु यह विकल्प अधिक सार्थक व सफल नहीं हो सकता था क्योंकि आवश्यक नहीं है कि मूल पाठ की भाषा का ज्ञाता हर जगह उपलब्ध हो सके। किसी भी भाषा की पुस्तक को सुलभता से उपलब्ध किया जा सकता है लेकिन उस भाषा के ज्ञाता को उपलब्ध कर पाना कठिन है। यदि यह मान भी लिया जाए कि वह भी उपलब्ध हो जाएगा तो भी कठिनाईयां संभव है यथा – दूसरे व्यक्ति द्वारा पढ़कर सुनाने में वक्ता और श्रोता दोनों को वह आनन्द अनुभूति नहीं हो पाती जो स्वाध्याय या स्वपठन से होती है क्योंकि आनन्द अनुभूति रस अर्थात् भाव पर आधारित होती है। एक ही भाव की अनुभूति हर व्यक्ति में अलग ढ़ंग से होती है क्योंकि हर व्यक्ति का बुद्धि तत्व, उसकी सोच, उसकी विचारधारा, उसके वातावरण, उसकी परिस्थितियों के अनुसार अलग हो जाता है। बुद्धितत्व के आधार पर किसी शब्द या पंक्ति में क्या भाव निहित है उससे क्या अनुभूति होती है वह उसके विवेक, उसकी सोच, उसकी विचारधारा, उसकी परिस्थितियों पर निर्भर करती है अतः दोनों की आनन्द अनुभूति में अंतर हो जाता है। साथ ही यह अनुभूति पाठक और श्रोता की मनःस्थिति पर निर्भर है कि जिस समय श्रोता उससे सुनना चाहता है तब वक्ता भी सुनाने के लिए तत्पर है या नहीं, उसका मूड अर्थात् मन है या नहीं, उसके पास समय की उपलब्धता या अनुकुलता है या नहीं। वह स्वयं को एक बंधन में बंधा हुआ सा अनुभव कर सकता है या यह भी संभव है कि वह थका हुआ है या उस रचना में उसे स्वयं कोई रूचि न होने के कारण रसानुभूति नहीं हो रही हो।

ऐसी स्थिति में उसे यह बोझिल व रसहीन कार्य लगेगा और वह रचना तथा उसके मौखिक अनुवाद को सुनकर रसानुभूति करने वाले इच्छुक आस्वादक के साथ न्याय नहीं कर पाएगा। इसी प्रकार की कुछ स्थिति आस्वादक के साथ भी संभव है ऐसी अनेक समस्याएं मौखिक अनुवाद में बाधा बन सकती है। मौखिक अनुवाद की इन समस्याओं को दृष्टिगत करते हुए ऐसे विकल्प के बारे में सोचा गया जो मूल साहित्य की आत्मा को ज्यों को त्यों रखे, उसका अन्तःबाह्य स्वरूप भी यथावत् रखे और जिसके माध्यम से मूल साहित्य अनुदित साहित्य में परिवर्तित होकर सुरक्षित होते हुए मूल सामग्री की जैसी आनन्द अनुभूति भी दे सके। इस प्रकार साहित्य जगत में साहित्यिक धरोहर को विस्तृत व व्यापक क्षेत्र प्रदान करने और संरक्षित करने हेतु जो विकल्प उभरकर आया वह है– 'अनुवाद'।

अनुवाद वह साधन है जो मानव–मात्र को भाव और विचार के स्तरों पर निकट लाता है। मानव को मानव के निकट लाने की दृष्टि से एक वाक्य में इसे इस प्रकार समझा जा सकता है कि "अनुवाद आत्मा से आत्मा तक, हृदय से हृदय तथा बुद्धि से बुद्धि तक सेतु का कार्य करता है"[9]

अनुवाद सदियों से ही देश–काल निरपेक्ष स्तर पर मानव–मानव के बीच के अजनबीपन को दूर करता आया है। सुदूर अतीत में दूर दराज के देशों में आपसी व्यवहार के प्रमाण मिलते हैं। बौद्ध–जातक कथाओं में भारत के अन्य देशों के साथ ऐसे व्यापार का विवरण मिलता है। स्वाभाविक है कि व्यापारी वर्ग एक–दूसरे देश में आदान–प्रदान की दृष्टि से अनुवाद पर ही निर्भर करता था। ऐसे आदान–प्रदान के साथ–साथ सांस्कृतिक स्तर पर आदान–प्रदान आरम्भ हुआ। जन कथाओं के माध्यम से साहित्य, कला और दर्शन में एक–दूसरे देश परस्पर रूचि लेने लगे। भारत की पंचतंत्र की कथाएं यहां से अरब देशों में गई और वहां से होते हुए पश्चिम में गई। जिनका अनुदित रूप "अरेबियन नाईट्स" नाम से आज भी उतना ही लोकप्रिय है जितना कि वह उस काल में रहा होगा। अंग्रेजी में 'ईसप टेल्स' नाम से प्रसिद्ध पशु–पक्षियों की कथाएं 'पंचतंत्र' की कथाओं से अलग नहीं है। तात्पर्य यह है कि 'अनुवाद' मनुष्य के लिए अन्य देशों, कालों और समसामयिक संदर्भ में मानव–मात्र और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर सभी उपलब्धियों को जानने व समझने और प्रगति करने का एकमात्र माध्यम है।

अनुवाद शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के अनु+वाद के योग से हुई है। यहां अनु का अर्थ 'के पीछे' के अनुसार है और वाद संस्कृत की वद् धातु से बना है जिसका अर्थ है – 'कहना'। इस प्रकार अनुववाद का अर्थ हुआ– 'के अनुसार कहना'। अंग्रेजी भाषा में इसे 'Translation' शब्द के पर्यायवाची रूप में ग्रहण किया जाता है। व्युत्पत्ति की दृष्टि से यदि 'ट्रांसलेशन' शब्द को भी यदि खोलकर देखें तो उसमें भी 'अनुवाद' शब्द के समान ही अर्थ प्राप्त होगा। ट्रांसलेशन शब्द 'ट्रांस' (Trance+lation) लेशन शब्दों से मिलकर बना है। इनमें से ट्रांस शब्द का अर्थ है– 'पार' और 'लेशन' का अर्थ है 'ले जाना'। यदि दोनों को जोड़कर अर्थ ग्रहण किया जाए तो वह यही होगा कि एक भाषा में कही गई किसी भी बात को दूसरी भाषा में पुनःप्रस्तुत करने का कार्य है। हिन्दी में भाषायी स्तर पर एक भाषा से दूसरी भाषा में मूल के यथावत, सम्प्रेषण के संदर्भ में जो अर्थ ग्रहण किया

जाता है और उसके लिए जो पारिभाषिक शब्द प्रयुक्त किया जाता है वह है अनुवाद। आज 'अनुवाद' इसी अर्थ में रूढ़ हो गया है।

अनुवाद चिन्तक पीटर न्यूमार्क ने भी इसी विचार का समर्थन करते हुए अनुवाद को परिभाषित किया है 'Translation is the transference of a message from one language into another.' अर्थात् 'अनुवाद एक भाषा में व्यक्त मन्तव्य की दूसरी भाषा में पुनराभिव्यक्ति है।' [10]

इसी प्रकार का विचार व दृष्टिकोण संस्कृत व हिन्दी विद्वानों ने भी व्यक्त किए हैं। जिनके विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि अनुवाद भाषागत बाधा को दूर कर भाव तथा चिंतन को सर्वजन सुलभ बनाता है। अनुवाद वह माध्यम है जिसके द्वारा किसी भी भाषा में व्यक्त मानवीय चिंतन की उपलब्धियों को अन्य भाषा में पुनर्प्रस्तुत किया जाता है। और जिसके माध्यम से यह चिंतन सार्वभौमिक पहचान प्राप्त करता है तथा इसमें आगे विकास की संभावनाएं खुलती हैं। कुल मिलाकर अनुवाद एक भाषा विशेष में लिखने वाली किसी भी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय अन्य भाषा–भाषियों से कराता है।

अनुवाद की यह विशेषता ही उसे साहित्य के संदर्भ में और अधिक उपयोगी बना देती है। मूल विषय 'साहित्य में अनुवाद की उपयोगिता' के चिन्तन–मनन के आरम्भ में जो जिज्ञासा मनःमस्तिष्क में उभरकर आई थी कि अनुवाद की आवश्यकता क्यों अनुभव की गई। उसके कुछ कारण परिलक्षित होते हैं यथा–

1. भारतीय तथा प्रमुख विदेशी साहित्य की जानकारी प्राप्त करना
2. साहित्य के आदान–प्रदान के माध्यम से विश्व की प्रमुख संस्कृतियों से परिचित होना।
3. विभिन्न धर्मों की श्रेष्ठ कृतियों– गीता, कुरान, बाईबिल, दास कैपिटल आदि से परिचित होकर उनमें समाहित ज्ञान अर्जित करना।
4. साहित्य के माध्यम से सामान्य जानकारी ज्ञानवृद्धि।
5. साहित्य के आदान–प्रदान के माध्यम से विश्व के विविध देशों में परस्पर वैचारिक स्तर पर सम्पर्क स्थापित करना।
6. विशेषतः साहित्य के संदर्भ में नई विधाओं की खोज।
7. साहित्य के शिल्प और कला के विकास की दृष्टि से।
8. साहित्य में प्रयुक्त करने हेतु नए प्रतिमानों एवं बिम्ब विधान आदि के विकास हेतु जो साहित्य के आदान–प्रदान द्वारा भी सम्भव हो सकते हैं।

इन समस्त दृष्टिकोण से साहित्य में अनुवाद की आवश्यकता अनुभव की गई। प्रत्येक सोपान पर खरा उतरते हुए अनुवाद साहित्य के क्षेत्र में अपनी उपयोगिता सिद्ध करता है। इसके साक्ष्य हमें साहित्य में ही उपलब्ध हो जाते हैं फिर चाहे साहित्य का शिल्प हो, चाहे साहित्य में प्रस्तुति, राष्ट्रीयता का भाव या ज्ञान शास्त्र से जुड़ा साहित्य रहा हो अनुवाद ने महत्ती भूमिका निभाई है।

भारतीय साहित्य का इतिहास साक्षी है कि जिस प्रकार का स्वर हिन्दी भाषी जनता की वाणी से मुखरित होता रहा है वैसा ही स्वर उसी काल में समस्त भारतीय भाषाओं में गुंजायमान रहा है। आज भारतीय भाषाओं के अनुदित साहित्य से यह सिद्धांत स्वतः प्रमाणित हो जाता है कि वर्षों लम्बे इतिहास में भारतीय साहित्य के विकास की परम्परा और दिशा एक ही रही है। मानव को मानव से साहित्य ही तो मिलाता है। मानव को मानव भी साहित्य ही बनाता है। निश्चय ही यदि अनुवाद न हुआ होता तो चिन्तन मनन और सृजना के धरातल पर व्याप्त अभूतपूर्व एकता के तत्व उजागर न होते। विभिन्न भारतीय भाषाओं के साहित्य का अनुवाद राष्ट्रीय एकता की पहली आवश्यकता है तभी हम चिंतन एवं बोध के धरातल पर एक होंगे।

'मानवीय एकता सौमनस्य, सौहार्द्र का एक ही सूत्र तो प्रस्तुत करते हैं। और इसे पुष्ट करते हैं – हिन्दी के रामचरित मानस, बंगला के कृतिवास रामायण, उडिया के बलरामदास, असमिया में शंकरदेव, मराठी में एकनाथ, तमिल में कम्बन, नेपाली में भानूदत्त के रामकाव्य। ये सभी एक ही समय में सामने आए और सबने राम कथा का समान स्वरूप और उद्देश्य प्रस्तुत किया।'[11] इसी प्रकार कृष्ण काव्य, निर्गुण काव्यधारा और पुनर्जागरण कालीन भारतीय साहित्य की भी यही स्थिति रही। काव्य में छायावाद में या नाट्यकृति हो, उपन्यास हो या कहानी, सभी में व्यक्त सामाजिक समस्याओं के प्रति स्वीकृत समान धर्मिता का संदेश अनुवाद के सहारे तो ही मिलता है।

भारतीय भाषाओं विशेषकर हिन्दी का आधुनिक युगीन साहित्य इस बात का प्रमाण है कि इस युग में खड़ी बोली आन्दोलन के दौरान विभिन्न विदेशी और देशी भाषाओं के अनुदित साहित्य के द्वारा हिन्दी साहित्य–सृजन का मानक प्रस्तुत किया गया। भारतेन्दु पूर्व, भारतेन्दु युगीन, द्विवेदी युगीन तथा द्विवेदी परवर्ती युग के अनुदित साहित्य के माध्यम से आधुनिक हिन्दी साहित्य समृद्ध भी हुआ। इस काल में विकसित विभिन्न गद्य विधाओं का श्रेय भी अनुदित साहित्य को ही जाता है। कविता की भी विभिन्न धाराओं– स्वच्छंदतावाद, छायावाद, प्रगति–प्रयोगवाद, नई कविता तथा उसमें विचार–परम्पराओं का प्रवेश अनुदित साहित्य के प्रभाव का ही परिणाम है। वास्तविकता यह है कि हिन्दी की कविता, नाटक, कथा साहित्य तथा अन्य विधाओं के बदलते स्वरूप और शिल्पगत परिवर्तन, चरित्र–चित्रण सम्बन्धी नई अवधारणाओं के विकास को अनुदित साहित्य में गति प्रदान की। एक ओर इन सबके अनुवाद से हिन्दी रचनाकारों का डंका भारत में बजा वहीं दूसरी ओर भारतीय भाषाओं के साहित्य अनुवाद से हिन्दी जनता भी परिचित हुई।

"रविन्द्रनाथ टैगोर, शरत्चन्द्र (बंगाली), वल्लतोल (मलयालम), अण्डाल, पोतना (तमिल), शंकरदेव (असमियां), नरसी मेहता (गुजराती), पुरन्दरदास (कन्नड़), विजय तेंदुलकर (मराठी) आदि से हम अनुवाद के सहारे ही तो परिचित हुए और यह भी स्पष्ट हुआ कि काल–विशेष में समग्र भारत में एक ही भाव–धारा, एक ही काव्यात्मक संवेदना निहित रही है। फलतः भारतीय साहित्य का ऐसा इतिहास हमारे समक्ष आया जिसके फलस्वरूप हिन्दी का रचनाकार अथवा तमिल, तेलगू, मलयालम का रचनाकार केवल उस भाषा या क्षेत्र विशेष का कृतिकार नहीं रह गया अपितु वह समस्त भारत की संवेदना का संवाहक बनकर जन–जन का गायक बना और अनुवाद का यह अवदान आज भी हिन्दी भाषा को निरन्तर प्राप्त है।"[12]

इतना ही नहीं हिन्दी के रचनाकारों – कबीर, सूरदास, तुलसीदास, जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, निराला आदि की कृतियों का अनुवाद ही देशी–विदेशी भाषाओं में हुआ। साहित्य जगत में अनुवाद परस्पर ना केवल भारतीय व हिन्दी भाषा में ही हुआ अपितु इनके साथ–साथ अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर भी हुआ। विशेषतः अंग्रेजी साहित्य का भारतीय भाषाओं में और साहित्य का अंग्रेजी व अन्य विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुआ।

भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने 1880 में शैक्सपीयर के नाटक 'मर्चेन्ट ऑफ वेनिस' का अनुवाद 'दुर्लभ बन्धु' और 1886 में श्रीधर पाठक ने गोल्डस्मिथ की काव्यकृति 'हरमिट' का 'एकान्तवासी योगी' नाम से अनुवाद किया। भारतेन्दु युग से आरम्भ हुई अन्तरराष्ट्रीय साहित्य के अनुवाद की यह परम्परा निरन्तर बढ़ रही है। यही कारण है कि विश्व के श्रेष्ठ साहित्यकार टॉलस्टाय, शेक्सपीयर, सार्त्र, ब्रेख्त, पाब्लो, नेरूदा इत्यादि के साहित्य चिन्तन, शैली और शिल्प से भारतीय पाठक व साहित्यकार अवगत है। अन्तरराष्ट्रीय साहित्यकार अध्ययन हमें वैश्विक अतीत और वर्तमान से जोड़कर रचनात्मक तथा मनुष्य के बदलाव को एक स्वस्थ व नई दिशा प्रदान करता है।

अनुवाद के माध्यम से ही जर्मन कवि 'गेटे' कालिदास कृत 'अभिज्ञान शाकुन्तलम' को पढ़कर चमत्कृत हुए थे। संस्कृत में रचे गए भारतीय उपनिषदों का संसार शॉपेन हॉवर और टी.एस. इलियट के समक्ष अनुवाद के द्वारा ही उजागर हुआ। साहित्य विश्व स्तर पर तभी पहुंच सकता है जब उसका अनुदित रूप उपलब्ध हो। 'भारत में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित कृति जो किसी भी भाषा में रची गई हो उसका अनुवाद हिन्दी तथा अन्य भाषाओं में उपलब्ध हो जाता है। मराठी भाषा के 'खांडेकर' की ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त कृति'ययाति' के भारतीय भाषाओं के साथ–साथ विदेशी भाषाओं में भी अनुवाद हो चुके है। रविन्द्रनाथ टैगोर की 'गीतांजली' यदि अंग्रेजी में अनुदित नहीं हुई होती तो नॉबेल पुरस्कार नहीं मिल पाता।'

अतः यह कहने में संकोच नहीं है कि अनुवाद देश–भाषा और उसके साहित्य तथा उसकी मानवता के मध्य की वह श्रृंखला है जो ह्रदयों को एक साथ जोड़ता है।

उपयुर्क्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि अनुवाद भाषागत बाधा को दूर कर ज्ञान–विज्ञान, भाव और चिन्तन को सर्वजन सुलभ बनाता है। अनुवाद वह माध्यम है जिसके द्वारा किसी भी भाषा में व्यक्त मानवीय चिन्तन की उपलब्धियों को अन्य भाषा में पुनर्प्रस्तुत किया जाता है और जिसके माध्यम से वह चिन्तन, सार्वभौमिक पहचान प्राप्त करता है। कुल मिलाकर अनुवाद एक भाषा विशेष में लिखने वाली किसी भी विशिष्ट प्रतिभा से अन्य भाषा–भाषियों को अवगत कराता है।

साहित्य के संदर्भ में अनुवाद की उपयोगिता के विषय में यह कहना समीचीन है कि विश्व साहित्य के चिरन्तन सार्वभौमिक ग्रन्थों का, प्राचीन भाषाओं की शाश्वत् गौरव–कृतियों का तथा वर्तमान जगत की नवीनतम बहुमूल्य रचनाओं का अनुवाद किए बिना कोई भी भाषा वाड्.मय की समृद्धि अथवा पूर्णता का स्वपन पूरा करने में सक्षम नहीं हो सकती। अतः साहित्य के प्रचार–प्रसार एवं संवर्धन में अनुवाद की अहम् भूमिका है जो साहित्य में उसकी उपयोगिता को स्वतः प्रमाणित करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. सुरेश अग्रवाल, भारतीय काव्य शास्त्र के सिद्धांत पृ.22।
2. डॉ. सुरेश अग्रवाल, भारतीय काव्य शास्त्र के सिद्धांत, पृ. 23,24।
3. डॉ. सुरेश अग्रवाल, भारतीय काव्य शास्त्र के सिद्धांत, पृ.24।
4. डॉ. सुरेश अग्रवाल, भारतीय काव्य शास्त्र के सिद्धांत, पृ. 24।
5. राजशेखर, काव्य मीमांसा।
6. Hudson, Study of Literature.
7. मुंशी प्रेमचन्द, कुछ विचार, पृ. 6।
8. बाबू गुलाब राय, काव्य के रूप, पृ.2।
9. डॉ. अंजू शर्मा, अनुवादिका, पृ. 67।
10. विपिन चन्द्र, अनुवादिका, पृ. 62।
11. प्रो. राजमणि शर्मा, अनुवाद विज्ञान पृ. 193।
12. प्रो. राजमणि शर्मा, अनुवाद विज्ञान, पृ. 195।
13. प्रयोजन मूलक हिन्दी, डॉ. विजय कुलश्रेष्ठ, पृ. 445